आँच

हरि भटनागर

हिन्दी ADDA

आँच

https://www.hindiadda.com/aanch-hari-bhatnagar/

उसका नाम जगदीश था। सामने की पहाड़ी पर, ढाल की तरफ, नाले से सटी, कई सारी झुग्गियों के बीच उसकी झुग्गी थी।

मेरा स्विचबोर्ड खराब हो रहा था, लैंप किसी तरह जलता न था। क्षण भर को जलता फिर बुझ जाता। ट्यूबलाइट की रोशनी मेरे लिए नाकाफी थी। लैंप की रोशनी में ही मैं लिखता-पढ़ता था। कमजोर नजर भी इसका एक कारण था। खैर, लैंप अब जल ही नहीं रहा था तो लिखूँगा क्या? खाक!!! जबकि अखबार का कॉलम मुझे देर रात या ज्यादा से ज्यादा नौ-दस बजे सुबह तक लिखकर, हर हाल में, मेल करना होगा। समय-सीमा का मामला है। और जीविका का आधार! कॉलम के अलावा दूसरा कोई हीला भी अपने पास नहीं है। सो, परेशान हो उठा था मैं! तभी जगदीश का ध्यान आया। क्यों न उसे बुला लाऊँ? है तो वह दुष्ट, भारी नशैला, बावजूद इसके काम जानता है। मिनटों में स्विचबोर्ड ठीक कर देगा। पहले भी कई सारे काम वह कर चुका था। अभी दस दिन पहले मीटर के खराब हुए बोर्ड को उसने ठीक किया था और जो भी पैसा दिया था, झुककर सलाम करता चला गया था...

इस वक्त मैं उसकी झुग्गी को खोजता धीरे-धीरे चल रहा था कि उसने मुझे खंभे की धुँधली लाइट में जैसे दूर से देख लिया हो, करारी आवाज जिसमें नशे का डाँवा-डोलपन था, लगाता टटरा हटाता, हाथ लहराने लगा जैसे बतलाना चाह रहा हो कि साब! मैं यहाँ, इस झुग्गी में रहता हूँ। कोई काम हो तो बताएँ, मिनटों में चुटकी बजा के निपटा दूँगा। - टटरा हटाकर वह बाहर निकल आया था। ठिठककर रुक गया जैसे आगे बोल रहा हो - लेकिन साब! काम मैं कर दूँगा, मगर पिछली दफा की तरह पैसे झंख के मत देता। उस दिन तो मैं पता नहीं क्या सोच के, लौट आया था, पैसे जेब में डाल लिए थे, मगर दिमाग भारी गरम था। शराब की दुकान पर तो और गरम हो गया था जिसे मैं किसी तरह काबू नहीं कर पा रहा था। बार-बार आपकी मैया-बहन कर रहा था। दो सौ का काम और पचास रुपये! इसमें एक पाउच भी ढंग का नहीं मिल रहा था...

मैं जगदीश को देख रहा था। सोचने लगा, कमीन लगी में है, काम क्या करेगा! मैं अटकी में था, दूसरा कोई मिस्त्री इस वक्त मिलने से रहा, सो उसकी तरफ बढ़ा।

इस बीच जगदीश ने आगे बढ़कर, मेरा हाथ पकड़ लिया। कँटीला, लोहे की संड़सी जैसा हाथ! क्या खाता है साला!!!

यकायक मुझे एहसास हुआ कि हाथों पर उसकी पकड़ सख्त हो गई है। पूरी ताकत लगाकर भी हाथ छुड़ाना संभव नहीं। वह मुझे अपने तख्ते पर बैठालना चाह रहा था, चाय पिलाने की खातिर। उसने मुझे अपनी तरफ खींचा। बचाव में मैं फिर कभी फुर्सत

से बैठने की कहके उसकी लौह पकड़ से छूट पाया। और सुकून-सा महसूस कर रहा था...

और इस वक्त तो मैं और सुकून-सा महसूस करने लगा जब उसने अपने इन्हीं संड़सी जैसे पंजों से स्विचबोर्ड ठीक करके लैंप जला दिया।

इसके पहले मेरा सुकून गायब था। जगदीश स्विचबोर्ड को पूरा खोल चुका था और लैंप किसी तरह जल नहीं रहा था। करंट ही नहीं था। काफी देर तक वह स्विचबोर्ड से उलझता रहा। उसने सारे प्वाइंट खोल डाले थे। टेस्टर से बार-बार करंट की जाँच करता और करंट था कि पूरी तरह नदारद! इस चक्कर में वह कई बार मीटर के बोर्ड को देख आया था। मामला सुलझता न था। आखिर मैं उसने एक नया स्विचबोर्ड फिट किया, जो उसके छोटे से अगड़म-बगड़म सामानों से भरे झोले में ठँसा था। उसने प्वाइंट के तारों को अदला-बदला कि करंट आ गया - लैंप जल उठा था।

मैंने राहत की साँस ली और जैसा कि पहले कहा, सुकून-सा महसूस किया लेकिन यह सुकून पूरी तरह गायब हो गया जब उसने पैसे लेने से इनकार कर दिया। पचास के नोट को चूतिया बनाना कह रहा था और बड़बड़ाने लगा था कि एक तो काम कर दिया, उस पर पैसे दे रहे हैं जैसे मैं भीख माँग रहा होऊँ! कहीं दूसरी जगह काम किया होता तो सौ-डेढ़ सौ तो मिल ही जाते - यहाँ पचास रुपट्टी!!! जैसे मैं कोई चूतिया हूँ! चूतिया!!! काम की कोई वैल्यू नहीं। अभी लैपटॉप खराब हो जाता तो आपरेटर पाँच सौ खैंच लेता और आप खुश हो के देते - लेकिन मुझे देते...

उसने नोट सामने फेंक दिया जैसे गाली देता कह रहा हो कि नहीं चहिए!

- कितना गंदा आदमी है। बेअदबी पर उतर आया है। बावजूद इसके मैं सहज रहा, शांत भाव से पूछा - कित्ते चहिए भैया?

- कित्ते चहिए भैया? जैसे कुछ जानते-समझते नहीं - उसने मुझे कठोर निगाहों से देखा। आँखों में नशे की लालिमा थी। बाल लटों की शक्ल में धूल-पसीने से भरे। नाक लबी और मस्सों से भरी थी। मूँछें गीली, टूटी छतरी जैसी जिसमें मिचमिची आँखों का पानी रिस-रिस कर ठहर गया हो। कमीज के बटन नदारद। छाती चौपट खुली हुई। छाती के सफेद-काले बाल कँटीली झाड़ी की तरह गुत्थम-गुत्थ थे।

उसकी यह धज देख मैं दंग था।

- कित्ते चहिये भैया!!! अपने को गौर से देखे जाने पर मेरी नकल-सी बनाता, दोनों हाथों को मत्थे पर मारता वह तकरीबन बिफर-सा पड़ा - पचास रुपट्टी होते हैं इस काम के?

- और कित्ते होते हैं? - मैं सख्त आवाज में अकड़कर बोला।

- सौ तो दीजिए! थोड़ा ढीला होता वह बोला।

- सौ! नागवार-सी गुजरती उसकी बात पर मैं जोरों से बोल पड़ा - सौ रुपये तो किसी कीमत पर नहीं दे सकता। यह तो बेईमानी है!

- बेईमानी! काम सुलटा देना बेईमानी होता है! - वह गर्दन हिलाता हुआ बोला - अगर मैं काम करने से पहले पैसा बता देता तो आप न चाहते हुए भी देते। जब सौदा तय नहीं हुआ तो सही मेहनताना देने से कतरा रहे हो - यही बात तो बुरी लगती है, आप लोगों की!!!

- क्या? हम सब लोग बेईमान हैं, तुम लोगों का पैसा मार लेते हैं? - मैं आग-बबूला होता गरजा।

- इसमें गरम होने की क्या बात है, साब? जो बात सच है, उसे मंजूर क्यों नहीं करते?

- हम लोग तुम लोगों का हक मारते हैं? - मैं मन की पूरी बात जान लेना चाहता था।

- जी! आप लोग, हम लोगों का हक मारते हैं। अभी-अभी आप मेरा मेहनताना मार रहे हैं, उस पर आँखें दिखला रहे हैं!!!

- मैं आँख दिखला रहा हूँ कि तू? - मेरी शालीनता अब जवाब देती जा रही थी।

- पूरे पैसे नहीं मिलेंगे तो आँख दिखाना कहाँ का जुर्म हुआ?

- सौ रुपये तो मैं नहीं दे सकता, तुझे लेना हो तो ले, नहीं, फुट यहाँ से।

- ठीक है साब! जाता हूँ; लेकिन जान लीजिए...

- हाँ-हाँ, जान लिया! तेरी भभकी से मैं डरने वाला नहीं। किसी से भी पूछ ले, इस झटल्ली काम के कित्ते पैसे होते हैं?

झटल्ली! झटल्ली है मेरा काम? - आग की तरह जलता वह मेरे सामने तनकर खड़ा हो गया। गहरी-गहरी साँसें लेता। आँखें उसकी लाल और चेहरा गुस्से से तमतमा उठा था। मुट्ठियाँ भिंच गई थीं।

न चाहते हुए भी मुँह से गाली निकल गई थी, पीछे हटने पर हेठी होती, इसलिए मैं भी तनता हुआ जोरों से बोला - झटल्ली काम नहीं, तो क्या है? कौन सा ट्रांसफार्मर ठीक कर दिया।

झोला जमीन पर पटकता-सा मुट्ठियाँ टकराता तड़ककर गर्दन हिलाता वह बोला - काम, काम होता है, साब! लैंप हो या ट्रांसफार्मर! काम को गाली देना बहुत ही गंदी बात है! फिर, काम झटल्ली था तो क्यों आए मेरे पास झुग्गी में, बैठे रहते अपने घर में! तब तो दौड़े चले आए...

- ठीक है यार! - जब मैं शर्मिंदगी के लहजे में थोड़ा नरम हुआ तो वह अफसोस में सिर हिलाता बोला - चालीस साल हो गए काम करते - मेरे काम की, हुनर की सभी तारीफ करते हैं। आज तक किसी ने ऐसा कचरा नहीं डाला जैसा आपने!

अपनी गलती मानने पर भी यह कमीन सिर पर चढ़ा जा रहा है, मेरा पारा यकायक फिर चढ़ गया, बोला-कौन सा कचरा डाल दिया? जब मैं मान रहा हूँ कि गलती हो गई, फिर काहे को तूल दे रहा है? - थोड़ा रुककर हाथ हिलाता आगे बोला - हाँ, झटल्ली ही काम है तेरा! जो करना है, कर ले! मैं हजार बार यही कहूँगा!

उसके बदन पर जैसे आग डल गई हो, छौंछिया-सा गया, फिर विस्फारित आँखों से मुझे एकटक देखते हुए सिर हिलाने लगा, जैसे सोच रहा हो कि तेरा सोच बहुत ही गलीज है! समझाइश से कोई बात बनने वाली नहीं और तू उससे सुधरने वाला भी नहीं! तेरे साथ ऐसा कुछ करना होगा जिससे तेरी सारी हेकड़ी निकल जाए। थोड़ी देर के लिए वह कहीं खो-सा गया। यकायक उसने कुछ दृढ़ निश्चय-सा किया। उसी बहाव में सहसा उसने सिर झटका, अपने को सँभाला और सीधा खड़ा हो गया। जैसे गेट खोलने के लिए कह रहा हो। उसका लहजा अब एकदम शांत था। जब मैंने गेट नहीं खोला तो झुककर उसने खटका हटाया और बाएँ कंधे से हल्के से उसे ठेलता बाहर निकला और मिनटों में नजर से ओझल हो गया।

मैं भयंकर गुस्से में था, बुदबुदाया - ठीक है, भाग जा और उसे जलती निगाहों से जाता देखता रहा। बावजूद इसके अंदर ही अंदर अफसोस ने करवट ली कि दुष्ट काम तो कर

गया, पैसे के लिए ऐंठ दिखला रहा था। दस-पाँच और ले लेता! मगर नहीं। जैसे मैं पीछे-पीछे आऊँगा, रिरियाऊँगा।

काफी देर तक मैं गेट के सहारे खड़ा रहा और उसके लौटने का इंतजार करता रहा। आखिर में हारकर अपनी मेज पर आ गया। लैंप जलाया। रूलदार कागज को देखता हूँ। विषय का खयाल करता हूँ। पेन उठाता हूँ।

तीन घंटे बीत गए, एक शद नहीं लिख पाया हूँ। कुछ सूझ ही नहीं रहा है।

रात है, सर्दी की रात। सब ओर खामोशी। गहरी खामोशी। पेड़ भी खामोशी की साया में डूबे। दूर कहीं कोई माचिस जलाए तो उसकी आवाज सुनाई दे।

मैं पेन लिए बैठा हूँ। रूलदार कागज पर निगाह डालता हूँ। दिमाग जगदीश में लगा है।

- साला! दुष्ट! नीच! कमीन! - ये मन के भाव हैं - गजब है! पैसे फेंक के चला गया। जाते-जाते कैसा मुँह बना रहा था - जैसे खा जाएगा! मैंने पेन रखा तो बाहर किसी के चलने की आवाज आई। चप्पलों को घिसटाता जैसे कोई चलता आ रहा हो। जाहिर था कि जगदीश लौटने वाला नहीं। तीन घंटे बाद भला वह नशैला क्या लौटेगा? देखा तो जगदीश था। झाँककर देखने पर ही जगदीश ने मुझे देख लिया था और भारी खुश हुआ था अंदर ही अंदर। और बीच सड़क पर, मेरे घर के सामने झुककर टेढ़ा खड़ा हो गया।

मैं कुर्सी से उठ खड़ा हुआ। घबराया। यह इतनी रात में क्यों आया? पैसा चाहता है क्या? लेकिन पैसे के लिए उसे आवाज देनी चाहिए? गेट पर खट-खट करना चाहिए? यह तो ऐसा कुछ भी नहीं कर रहा है? जरूर इसकी कोई नई चाल है? इतनी रात गए यह कोई ऐसा नाटक करेगा जिससे मुहल्ले के लोग इकट्ठे हो जाएँ और फिर यह उनके सामने अपनी बात रखे। चिल्लाकर कहे कि साब, कॉलोनी के एक रसूखदार आदमी की हरकत तो देखो, पहले किसी भी तरह से झुग्गी से मुझे बुलाकर ले आते हैं, काम करवाते हैं - पैसे के वक्त गाली देते हैं - यह कहाँ का न्याय है?

उसने ऐसा कुछ भी नहीं किया। शांत भाव से खड़ा रहा। रह-रह वह गर्दन उठाकर आसमान की ओर लेता जैसे कँपकँपाते तारों से अपने साथ हुए अपमान की शिकायत कर रहा हो!

थोड़ी देर बाद वह सीवरलाइन के बड़े से पत्थर पर बैठ गया, पाल्थी मारकर। शांत भाव से बैठकर अपनी आमद भर से जैसे वह मुझे बेचैन करना चाह रहा हो।

मैंने सोचा कि गेट खोलूँ और जो भी रुपये माँगे, उसकी तरफ फेंक दूँ - मैंने आलमारी से रुपये भी निकाल लिए लेकिन फिर यह सोचकर रुक गया कि इससे तो इसका हौसला बढ़ जाएगा। सोचेगा कि मैं डर की वजह से पैसे दे रहा हूँ। मैंने आलमारी बंद कर दी और गेट पर आ खड़ा हुआ। संध से देखा - वह शांत बैठा है - मेरे घर की ओर देखता हुआ।

यकायक उसने चप्पलें उतार दीं और एक चप्पल को जमीन पर हन-हन कर कई बार पटका।

कमीना चप्पलें बजा रहा है - मैं बुदबुदाया।

चप्पल पटककर वह फिर शांत बैठ गया। अनशन की मुद्रा में। घुटनों पर उसने दोनों हाथ टिका लिए और मेरे घर की तरफ एकटक देखने लगा।

मैंने सोच रखा था कि नंगई के चलते मैं इसे एक पैसा न दूँगा, चाहे जो हो जाए; लेकिन उसकी इस नंगई ने मुझे बेचैन कर दिया है। सर्दी में शांत क्यों बैठा है? पैसा माँग ले तो मैं दे-दा के किसी तरह मामला खत्म करूँ, मगर यह कमीन ऐसा कुछ भी नहीं कर रहा है।

मैं हत्प्रभ हूँ और उस पर निगाह रखे हूँ।

मेरा पूरा ध्यान लिखने पर नहीं, जगदीश पर है।

थोड़ी देर बाद मुझसे रहा नहीं गया। मैंने दरवाजा खोला, लोहे के गेट का खटका सरकाकर उसके सामने आ खड़ा हुआ। पूछा - क्या बात है जगदीश? इत्ती रात में यहाँ क्यों बैठे हो?

वह चुप। पत्थर की मानिंद।

- मैं रुपये देने को तैयार हूँ - यह लो - जेब से मैंने सौ रुपये का नोट निकाला और उसकी तरफ बढ़ाता बोला - ले! सौ रुपये! और चुपचाप यहाँ से रफा हो जा।

वह पूर्ववत रहा।

- ले ना भाई! - मैं झल्ला उठा-क्या चाहता है तू? पुलिस बुलवाऊँ?

वह उसी तरह निश्चल।

हारकर मैं घर के अंदर आ गया, बुदबुदाता - भाड़ में जा तू। जो करना है कर!!!

जगदीश ने कोई गड़बड़ न की। पूर्व की तरह शांत बैठा रहा, घुटनों पर दोनों हाथ रखे उस पर सिर टिकाए - मेरे घर की तरफ एकटक देखता हुआ।

काफी रात गुजर चुकी है। ठंड बढ़ रही है। मैंने हीटर जला लिया है। बाहर जगदीश जैसे ठंड से बेपरवाह है।

- क्या करूँ? कालम तो गया अब!!! - गहरी साँस छोड़ता मैं माथे पर हाथ रखे सोचता हूँ, ऐसा कब तक चलेगा? जगदीश कोई नया नाटक करेगा क्या? जिसकी खातिर वह अभी तक शांत-बेपरवाह बैठा है।

जगदीश ने कोई नया नाटक नहीं किया। ठंड बढ़ने पर उसने आसमान की ओर देखा जैसा तारों से कह रहा हो कि तुम तो शायद नहीं, लेकिन मैं जरूर ठंड को टक्कर दे सकता हूँ - इस खयाल के चलते कूड़े के ढेर से कागज-पन्नियों को इकट्ठा किया। उसमें माचिस की काड़ी दिखलाई। थोड़ी देर में लपट उठने लगी जो तारों तक जाती लग रही थी जिसे वह बहुत ही प्यारी नजरों से देख रहा था।

अब वह उसकी आँच में और भी बेपरवाह हो गया था। और मेरे घर की तरफ लगातार, बिना पलक झपकाए देखे जा रहा था।

मैं हीटर की गरमाहट में भी काँप रहा था।

https://www.hindiadda.com/aanch-hari-bhatnagar/